21 अप्रैल 2020

स्नातक पार्ट 2 ऑनर्स

विषय ■ राजनीति विज्ञान

प्रसंग★★☆ तुलनात्मक राजनीति के उपागम(शेष व्याख्यान सँख्या 10)

By डॉ० देवेश पाण्डेय

MLS College sarisab pahi madhubani

राजनीतिक व्यवस्था विश्लेषण द ष्टिकोण का महत्व

(Importance of Political System Analysis Approach)

तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन को उपयोगी बनाने में व्यवस्था विश्लेषण का महत्वपूर्ण योगदान है। यह द ष्टिकोण राजनीतिक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों और गत्यात्मकताओं को समझने में महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। इस द ष्टिकोण द्वारा प्रस्थापित अवधारणाओं, प्रत्ययों और प्रविधियों ने सम्पूर्ण विश्व को राजनीतिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव बना दिया है। यह सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था पर अपना ध्यान केन्द्रित करके राजनीतिक व्यवस्था की सततता द्वारा सामान्य सिद्धान्त के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अग्रसर है। इस द ष्टिकोण का सम्बन्ध विश्व में अस्तित्ववान समस्त प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं से है। राजनतिक व्यवस्था की अवधारणा पर आधारित यह द ष्टिकोण राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न संरचनात्मक व कार्यात्मक पहलुओं पर द ष्टि रखने में तुलनात्मक अध्ययन में रुचि रखने वाले अध्येताओं की मदद करता है। इसके द्वारा राजनीतिक व्यवस्था को अस्थिर बनाने वाले तत्वों की पहचान करने में भी सहायता मिलती है। इस द ष्टिकोण तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। इस द ष्टिकोण ने तुलनात्मक राजनीति को परम्परागत सिद्धान्तों की दलदल से निकालकर आधुनिक बनाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। इस द ष्टिकोण ने 'राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा प्रस्तुत करके तुलनात्मक अध्ययन को समसामयिक व गतिवान बनाया है। इसने राजनीतिक व्यवहार की वास्तविकता को समझने में तुलनात्मक राजनीति की भरपूर मदद की है। अतः व्यवस्था विश्लेषण तुलनात्मक अध्ययन का सर्वोत्तम उपागम है और यह गत्यात्मक और व्यवस्था की सततता का सिद्धान्त निर्मित करने की ओर उन्मुख है। इस द ष्टिकोण के आगमन से

तुलनात्मक अध्ययन को जो नई दिशा मिली है, वही व्यवस्था विश्लेषण की अमूल्य देन है।

राजनीतिक व्यवस्था विश्लेषण द ष्टिकोण की आलोचनात्मक समीक्षा

(A Critical Evaluation of Political System Analysis Approach)

यद्यपि व्यवस्था विश्लेषण उपागम ने तुलनात्मक अध्ययन को उपयोगी बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया, लेकिन फिर भी यह उपागम अधिक लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर सका। ईस्टन तथा ऑमण्ड व पॉवेल ने इस द ष्टिकोण में नई नई अवधारणाओं, संकल्पनाओं का प्रयोग करके जटिलताओं का समावेश कर दिया। इस द ष्टिकोण को परिशुद्धता व परिमार्जितता प्रदान करने के चक्कर में ईस्टन ने इसे अव्यवहारिकता का ही जामा पहना दिया। इसकी आलोचना के आधार निम्नलिखित हैं :-

(1) राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा के साथ संरचनात्मक-कार्यात्मक व्याख्या जोड़ने से यह उपागम अधिक उलझनमय बन गया है। राजनीतिक विकास, राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक आधुनिकीकरण के बिना इस राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा को समझना कठिन है। दूसरी तरफ राजनीतिक व्यवस्था को अधिक स्वायत्तता प्रदान करके सामाजिक व्यवस्था की अन्य उप-व्यवस्थाओं के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया है। अतः यह द ष्टिकोण जटिल व अव्यवहारिक सा प्रतीत होता है।

(2) यह द ष्टिकोण निरन्तरता के सन्दर्भ में ही राजनीतिक व्यवस्थाओं को समझ सकता है, अकस्मात उत्पन्न होने वाले परिवर्तनों की व्याख्या करने में यह सहायक नहीं है।

(3) यह द ष्टिकोण अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की राजनीतिक व्यवस्थाओं जैसे 'संयुक्त राष्ट्र संघ' आदि का अध्ययन करने में उपयोगी नहीं है। इसी कारण व्यवहारवादी विद्वानों ने इसे संकुचित द ष्टिकोण कहकर आलोचना की है।

(4) यह द ष्टिकोण आगत-निर्गत व संरचनात्मक-कार्यात्मक विश्लेषण के आधार पर अभिजन-वर्ग अर्थात शासक वर्ग की राजनीतिक क्रियाओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है। इसका बहुसंख्यक समाज के वर्गों से कोई सरोकार नहीं है, अतः यह अभिजन-वर्ग के हितों का ही पोषण करता है।

(5) अभिजन-वर्ग के हितों का पोषक होने के कारण यह द ष्टिकोण यथास्थिति का पक्षधर है। यह क्रांतिकारी परिवर्तनों को राजनीतिक व्यवस्था में शामिल करने व उनकी व्याख्या करने में असमर्थ है।

(6) ईस्टन तथा ऑमण्ड ने मूल व्यवस्था से राजनीतिक व्यवस्था को जोड़कर इसको अव्यवहारिक बना दिया है। यदि सत्तात्मक रूपान्तरण को राजनीतिक व्यवस्था से अलग कर दिया जाए तो सामाजिक व्यवस्था की अन्य उप-व्यवस्थाओं से राजनीतिक व्यवस्था को अलग करना कठिन हो जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि व्यवस्था विश्लेषण में अनेक सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोष हैं। इसका मुख्य उद्देश्य यथास्थिति का समर्थन करके विद्यमान व्यवस्था का ही पोषण करता है। यह राजनीतिक व्यवस्थाओं को राष्ट्रीय स्तर पर ही परिभाषित करने और उनका अध्ययन करने में सहायक हो सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की व्यवस्थाओं का अध्ययन करने में यह द ष्टिकोण असमर्थ है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि यह द ष्टिकोण बिल्कुल ही अप्रासंगिक है। प्रो० पाल एफ० क्रीस ने लिखा है-"हमें इस संभावना के प्रति जागरूक होना चाहिए कि राजनीतिक व्यवस्था सिद्धान्त एक-न-एक दिन अवश्य ही संतोषजनक ढंग से राजनीतिक अन्वेषण में सक्षम होगा।" इसके लिए हमें राजनीति को क्रमबद्ध व व्यवस्थामूलक अर्थ में समझना अति आवश्यक होगा। इस

प्रकार हम कह सकते हैं कि राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा के विकास द्वारा इस द ष्टिकोण ने तुलनात्मक राजनीति की महान सेवा की है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उत्पन्न जटिल राजनीतिक परिस्थितियों में राजनीतिक व्यवहार को समझने में इस द ष्टिकोण ने तुलनात्मक अध्ययन को उपयोगी आधार प्रदान किया है। इसने तुलनात्मक अध्ययन द्वारा उपयोगी सामान्य सिद्धान्त निर्माण करने की दिशा में अग्रसर करने में महत्वपूर्ण भूमिका है।

21 अप्रैल 2020

स्नातक पार्ट 1 सब्सिडरी

विषय ■ राजनीति विज्ञान

प्रसंग ■■■■■राजनीति सिद्धान्त की प्रकृति एवम महत्व(शेष व्याख्यान संख्या 10)

By डॉ० देवेश पाण्डेय

MLS College sarisab pahi madhubani

राजनीतिक सिद्धांत का विषय क्षेत्र

आज के युग में राजनीति का क्षेत्र उतना ही व्यापक हो गया है जितनी कि मनुष्य की गतिविधियाँ, जीवन के प्रत्येक पहलू को राजनीति स्पर्श करती है। इसी कारण राजनीतिक सिद्धांत का विषय क्षेत्र भी व्यापक हो गया है, राजनीतिक सिद्धांतशास्त्री को अनेक विषयों से संबंधित सिद्धांत का निर्माण करना पड़ता है। अतः उदारवादी और मार्क्सवादी निश्चित विषयों से कहीं आगे निकलकर अनेक विषयों को राजनीतिक सिद्धांत के कार्य क्षेत्र में शामिल किया जाता रहा है। आधुनिक राजनीतिक सिद्धांतशास्त्री मुख्यतः निम्न मसलों को अपने निष्कर्षों का विषय-क्षेत्र बनाते हैं–

1. राज्य और सरकार का अध्ययनः राजनीतिक सिद्धांत के विषय क्षेत्र के अंतर्गत सर्वप्रथम राज्य और सरकार का अध्ययन आता है। प्राचीनकाल से ही राजनीतिक सिद्धांत द्वारा राज्य की उत्पत्ति, प्रकृति, विकास तथा कार्यक्षेत्र के बारे में विचार होता रहा है इसके साथ-साथ ही सरकार के विभिन्न रूपों जैसे–राजवंश, कुलीनतंत्र, लोकतंत्र, संसदीय अध्यक्षीय, एकात्मक, संघात्मक आदि का भी अध्ययन किया गया है तथा इनसे संबंधित कई समस्याओं जैसे–विधानमंडल एक सदनीय हो या द्विसदनीय, कुशल कार्यपालिका के क्या लक्षण हैं तथा अधिकारी तंत्र की क्या भूमिका होनी चाहिए आदि समस्याओं को राजनीतिक सिद्धांत के अंतर्गत उठाया जाता है और उनसे संबंधित निर्णयों का भी निर्धारण किया जाता है।

2. मानवीय समूहों, वर्गों और संस्थाओं का अध्ययनः राजनीतिक सिद्धांत में राज्य और सरकार के अध्ययन के साथ-साथ समाज में निहित मानवीय समूहों विभिन्न वर्गों, संस्थाओं का भी अध्ययन किया जाता है क्योंकि समाज के इन विभिन्न रूपों से अलग रखकर राज्य या सरकार का अध्ययन संभव नहीं है। समाज में कोई भी समुदाय या वर्ग स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाता इसलिए उनका दूसरे वर्गों से भी संबंध होता है। बहुलवादियों ने राज्य के अन्य समुदायों जैसे मज़दूर संघ, व्यावसायिक संघ, छात्र व महिला संघों, परिवार आदि के अध्ययन पर विशेष बल दिया है। मार्क्सवादियों का वर्ग संरचना व संघर्ष का सिद्धांत तो इसका केन्द्रबिन्दु बन गया है।

3. राजनीतिक दल प्रणाली, मताधिकार तथा चुनावी राजनीति से जुड़े प्रश्नों का अध्ययन व समीक्षाः राजनीतिक सिद्धांत के अंतर्गत राजनीतिक दल, उनकी संरचना व कार्यों का भी अध्ययन किया जाता है। मुख्य रूप से एकदलीय प्रणाली, द्विदलीय प्रणाली तथा बहुदलीय प्रणाली की विस्तृत चर्चा की जाती है। इसके साथ-साथ लोगों

को प्राप्त होने वाले मताधिकार और प्रतिनिधित्व के विषय में भी बहुत से सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष निर्णयन प्रणाली जैसे विषय भी इसके अंतर्गत आते हैं।

4. मानवीय व्यवहार का अध्ययन: मानव ही समस्त गतिविधियों का केन्द्र होता है इसलिए राजनीतिक सिद्धांत के अंतर्गत मानवीकरण व्यवहार का भी अध्ययन किया जाता है। व्यवहारवादी राजनीतिक सिद्धांतशास्त्रियों ने मानवीय व्यवहार को ही अपने अध्ययन की मूल इकाई माना है। इस मानवीय व्यवहार के अंतर्गत मनुष्य की न केवल प्रत्यक्ष क्रियाओं को बल्कि मनुष्य की प्रवृत्तियों, आस्थाएँ और आकांक्षाओं को शामिल किया जाता है। राजनीतिक सिद्धांत के अन्तर्गत ही मनुष्य की गतिविधियों को निश्चय करते हुए उनके विकास में बाधक बनने के स्थान पर उनकी आकांक्षाओं की पूर्ति के अनुकूल ही सिद्धांतों का निर्माण किया जाता है। इस क्षेत्र में **लासवैल, जी आमण्ड, जी मोस्का, परेटो, डेविड ईस्टन** आदि विद्वानों का विशेष योगदान रहा है।

5. राजनीतिक शक्ति का अध्ययन: राजनीतिक सिद्धांत के अन्तर्गत राजनीति शक्ति का भी अध्ययन किया जाता है। अनेक विद्वानों ने राजनीति को शक्ति का विज्ञान कहा है। **मैक्स वेबर, हेरोल्ड लासवेल, जार्ज कैटालिन, राबर्ट ए. डहल आदि विद्वान शक्ति सिद्धांत के पक्षधर** रहे हैं। राजनीति शक्ति का सिद्धांत उतना ही प्राचीन है जितना की राजनीतिशास्त्र है। इसका अध्ययन प्लेटो की रिपब्लिक से लेकर आजतक हो रहा है। इस अवधारणा को विशेष बल राष्ट्र-राज्य के उदय से प्राप्त हुआ है।

6. विकास और आधुनिकीकरण की समस्याओं का अध्ययन: समाज शास्त्र के बढ़ते प्रभाव के कारण राजनीतिक सिद्धांत में कुछ नवीन अवधारणाओं को भी अपनाया गया है जिसमें समाजीकरण, विकास, गरीबी, असमानता तथा आधुनिकीकरण शामिल है। विकास और आधुनिकीकरण से उत्पन्न समस्याएँ राजनीतिक सिद्धांतों के प्रमुख संदर्भ-बिन्दु बन गए हैं। इसी कारण आज के अधिकांश सिद्धांतशास्त्री पिछड़े हुए देशों के विकास व राष्ट्र निर्माण के लिए निरंतर शोध करने में लगे हुए हैं।

जी. आमंड, डेविड एप्टर, डेविड ईस्टन, माइरन वीनर, ग्राहम वालाम, चार्ल्स मेरियम आदि का क्षेत्र में योगदान रहा है। **रजनी कोठारी** ने भारत के सामाजिक, राजनीतिक विकास का क्रमबद्ध अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि जातिवाद, सम्प्रदायवाद तथा दलित राजनीति अब भारतीय राजनीति के मुख्य केन्द्रबिन्दु बन गए हैं।

नोट्स आधुनिकीकरण से उत्पन्न एक अन्य समस्या दूषित पर्यावरण की है जिसका अध्ययन भी किया जा रहा है और ऐसे उपाय सुझाये जा रहे जिनसे न केवल पर्यावरण स्वच्छ हो बल्कि प्राकृतिक संसाधनों का भी संरक्षण किया जा सके।

7. नारीवादी सिद्धांत: राजनीतिक सिद्धांतकारों को पिछले कुछ वर्षों से नारीवादी आंदोलन काफी आकर्षित कर रहा है. आदिकाल से ही नारियों की स्थिति बड़ी ही दयनीय रही है वह परिवार की सदस्य होते हुए भी परिवार के मामले में उसका हस्तक्षेप असहनीय रहा है। न केवल समाज की उपलब्धियों से वंचित रही है बल्कि उसे पुरुष प्रधान समाज द्वारा उत्पीड़न का भी शिकार होना पड़ा है। सतीप्रथा, बालविवाह और देवदासी प्रथा ने तो उनकी स्थिति और दयनीय कर दी थी।

लेकिन 1970 के दशक में नारी मुक्ति के सवालों को लेकर बहुत गंभीर प्रयास किए गए। सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं की क्या स्थिति है और राजनीतिक क्षेत्रों में उनकी भागीदारी कैसे सुनिश्चित की जाए आदि जैसे विषयों पर गहन अध्ययन होने लगा। वर्तमान में राजनीतिक सिद्धांतशास्त्री एक ऐसे समाज के निर्माण के चिन्तन में लगे जिसमें समाज के प्रत्येक पुरुष और स्त्री को राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र में समान रूप से भागीदारी मिले।

8. सार्वभौमिक मूल्यों का अध्ययन: प्राचीन काल से लेकर आज तक विभिन्न विचारधाराओं का जन्म हुआ है उदारवाद, आदर्शवाद, व्यक्तिवाद, उपयोगितावाद, समाजवाद और गाँधीवाद ऐसी ही कुछ विचारधाराएँ हैं। इन विचारधाराओं का एकमात्र लक्ष्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जो कि स्वतंत्रता, समानता और न्याय के आदर्शों पर आधारित हो। उदारवादियों ने राजनीतिक स्वतंत्रता और नागरिक अधिकारों का समर्थन किया जिसका समर्थन मार्क्स ने भी किया लेकिन वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना के लिए उन्होंने समाज के वर्ग-भेद को समाप्त करने की बात कही। विकेन्द्रीयकरण का समर्थन गाँधीवाद द्वारा भी किया गया। वास्तव में ये भी विचारधाराएँ और उनके आदर्शों का अध्ययन राजनीतिक सिद्धांत में आज भी विशेष महत्त्व रखता है।

राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृति

राजनीतिक सिद्धांत की परंपरा बहुत प्राचीन है। राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृति इसके अर्थ के साथ जुड़ी है जबकि राजनीतिक सिद्धांत के अर्थ में विभिन्न विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत हैं। इसीलिए इसकी प्रकृति के बारे में भी भिन्न-भिन्न विचार पाए जाते हैं। इसलिए अध्ययन की दृष्टि से राजनीतिक चिंतन को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है–

परंपरागत राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृति: परंपरागत राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृति को शास्त्रीय चिंतन के नाम से भी जाना जाता है परंपरावादी विचारकों में मुख्यत: **प्लेटो, अरस्तु, हॉब्स, लॉक, कांट, हीगेल, मांटेस्क्यू, मिल, कार्ल मार्क्स** के नाम उल्लेखनीय है परंपरागत राजनीतिक सिद्धांत की मुख्य विशेषताओं का अध्ययन इस प्रकार किया जा सकता है–

1. वर्णनात्मक अध्ययन: परंपरागत चिंतन की मुख्य विशेषता यह है कि यह मुख्यत: वर्णनात्मक है। जिसका अभिप्राय यह है कि इसमें केवल राजनीतिक संस्थाओं और उससे संबंधित समस्याओं का वर्णन मात्र किया जाता था। उस संस्था में सुधार व समस्याओं को दूर करने के लिए कोई सुझाव या समाधान प्रस्तुत नहीं किया जाता था। अत: इस प्रकार का अध्ययन न तो व्याख्यात्मक था और न ही विश्लेषणात्मक, मात्र वर्णनात्मक था।

2. समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना: परंपरागत लेखकों के द्वारा जिन रचनाओं की रचनाएँ की गई हैं उसमें मुख्य उन समस्याओं का वर्णन किया गया है जोकि तत्कालीन समाज में मौजूद थी, अत: इन विद्वानों द्वारा उन समस्याओं के लिए स्थायी समाधान ढूँढ़ने की कोशिश की गई है। **प्लेटो** ने यूनानी नगर राज्यों में व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए 'दार्शनिक राजा' की बात कही है वहीं दूसरी तरफ मैक्यावली ने इटली की तत्कालीन दुर्दशा को देखकर, राजा को अपने राज्य को विस्तृत तथा मजबूत करने के लिए झूठ, कपट, हत्या अन्य सभी प्रकार के साधनों के प्रयोग करने का अधिकार व आदेश देता है। इसी प्रकार **हॉब्स** भी अराजकता की स्थिति को समाप्त करने के लिए अपनी पुस्तक 'लोवियाथन' में निरंकुश राजतंत्र का समर्थन करता है। इस प्रकार परंपरागत चिंतकों द्वारा मुख्यत: तत्कालीन समाज में मौजूद समस्याओं के समाधान की तरफ ही ध्यान दिया गया। और उनसे ही संबंधित रचना की।

3. दर्शन, धर्म और नीतिशास्त्र का प्रभाव: परंपरागत चिंतन की एक अन्य विशेषता यह रही कि वे धर्म और दर्शन से विशेष रूप से प्रभावित रहे हैं तथा उनमें नैतिक मूल्य विद्यमान रहे हैं। **प्लेटो** और **अरस्तु** के चिंतन में इनका कम प्रभाव दिखाई पड़ता है जबकि मध्ययुग में ईसाई धर्म ने चिंतकों के चिंतन को बहुत प्रभावित किया है। राज्य और धर्म के झगड़ों में यूरोप के कई विद्वानों द्वारा धर्म का पक्ष लिया गया है और कहा कि धर्म राज्य से प्रथम या श्रेष्ठ है तथा धर्माधिकारी राज्य के मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है। इसका समर्थन सर्वप्रथम थामस एक्वीनास द्वारा किया गया। बाद में विलियम आकम ने भी इस दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया।

4. क़ानूनी, औपचारिक तथा संस्थागत अध्ययन: परंपरागत अध्ययन मुख्यत: क़ानून द्वारा निर्मित औपचारिक संस्थाओं के अध्ययन तक ही सीमित था तथा संस्थाओं का मात्र संरचनात्मक अध्ययन किया गया था इन विचारों

के द्वारा औपचारिक संस्थाओं के बाहर जाकर अध्ययन करने का प्रयास नहीं किया गया। लॉस्की और मुनरो आदि जैसे विद्वानों ने भी अपने अध्ययन में संस्थाओं के क़ानूनी व औपचारिक रूप का ही अध्ययन किया है।

5. आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृतिः जहाँ तक आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत की प्रकृति का सवाल है तो इसके निर्धारण में सबसे बड़ा योगदान आनुभविक पद्धतियों को रहा है। जिनके द्वारा इस बात पर बल दिया गया कि राजनीतिक अध्ययन के लिए वैचारिक पद्धति अपनाई जाए। जिसके अंतर्गत सिद्धांतों में तथ्यों और मूल्यों पर बल दिया जाता है। इसके अतिरिक्त अब समाजशास्त्र और मनोविज्ञान जैसी विधाओं से भी खुलकर सहायता ली जाने लगी है। इनके पहले प्रभाव के कारण ही शक्ति, प्रभाव, सत्ता राजनीतिक अभिजन, राजनीतिक संस्कृति तथा राजनीतिक विकास जैसे विभिन्न अवधारणाओं का जन्म हो पाया है। शक्ति सिद्धांत विशेष योगदान चार्ल्स मेरियम और हैरोल्ड लासवैल का रहा है **वहीं मोस्का, पेरेटो और राबर्ट मिचेल्स ने 'राजनीतिक अभिजन' की धारणा को विकसित किया है। डेविड ईस्टन** ने भी 'व्यवस्था विश्लेषण' सिद्धांत के अंतर्गत निर्णय लेने की प्रक्रिया को निवेश एवं निर्गत के माध्यम से समझाया है।

निष्कर्ष (Conclusion)

राजनीतिक सिद्धान्त एक निरंतर चलने वाला संवाद है। राजनीतिक चिन्तन और परिकल्पना चलती रहेगी क्योंकि यह जीवन के उन मूल्यों के साथ सम्बन्धित है जो व्यक्ति के लिए जीने और मरने के प्रश्न होते हैं। सिद्धान्तों का उद्देश्य सामाजिक वास्तविकता के प्रति हमारी समझ में विस्तार करना और अच्छे जीवन की परिस्थितियाँ पैदा करना होता है। यह उपयुक्त सामाजिक जीवन के लिए विचार विमर्श है। यह शक्ति के सार्वजानिक प्रयोग द्वारा परिभाषित राजनीतिक जीवन की समझ है। राजनीति सिद्धान्तों का सम्बन्ध 'राजनीतिक' से है तथा 'राजनीतिक' से सम्बन्धित खोज परम्परागत दृष्टिकोण से 'अच्छे जीवन' की प्रकृति की जाँच पड़ताल रही। राजनीतिक सिद्धान्तकारों को इस प्रश्न का जवाब देना होता है कि 'राजनीतिक, क्या है? यह क्या हो सकता है और एक ऐसे विश्व में जहाँ लगातार एवं तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं, 'राजनीतिक' का अर्थ क्या हो सकता है। राजनीतिक सिद्धान्त एक उच्चतम राजनीतिक व्यवस्था का मॉडल तैयार करते हैं तथा राजनीतिक आकड़ों के क्रमबद्ध संचय तथा विश्लेषण में सहायता करते हैं । यह उस विश्व को भी प्रभावित करते हैं जिसमें हम जी रहे हैं तथा उन चयनों को भी प्रभावित करते हैं जो हम करते हैं। ये हमारे सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन के सुधार एवं परिशुद्धन में भी सहायता करते हैं।

राजनीति सिद्धान्त, जहाँ तक ये तथ्यों पर आधारित है, इतिहास है; जहाँ तक यह घटनाओं का मूल्यांकन करते हैं, यह दर्शनशास्त्र है और जहाँ तक ये घटनाओं की वैज्ञानिक दृष्टिकोण की जाँच करते हैं, यह अनुभववादी है। जैसा कि डेविड हेल्ड लिखता है, समकालीन राजनीतिक सिद्धान्त दार्शनिक है अर्थात् इसका सम्बन्ध अवधारणाओं एवं आदर्शों से है, यह अनुभववादी है क्योंकि यह व्याख्या एवं वर्णन से भी सम्बन्धित है तथा यह सामाजिक है क्योंकि ये इस प्रकार के मूल्यांकन से साथ जुड़े हुए हैं कि हम कहाँ हैं और कल कहाँ जा सकते हैं।

राजनीतिक सिद्धान्तों का विकास दार्शनिक आदर्शवादी अतीत से आरम्भ होकर द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अनुभववादी सिद्धान्त तक आता है। 1970 के दशक में आदर्शवादी सिद्धान्त को एक बार फिर से जीवित किया गया। परन्तु साथ ही 1970 तथा 1980 के दशकों में इसे उत्तर-आधुनिकतावाद तथा अन्य कई प्रकार के सामाजिक आन्दोलनों, जैसे नारीवाद की चुनौती का सामना करना पड़ा। यह पुनरुत्थान मुख्यतः रॉल्स, नोज़िक तथा हैबरमास जैसे दार्शनिकों के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप हुआ। पुनरुत्थान के बाद राजनीतिक सिद्धान्तों में जिन विषयों को विशेष रूप से उठाया गया है, वे हैं सामाजिक न्याय तथा कल्याणकारी अधिकार। परन्तु जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया गया इस प्रकार का जोश हमें केवल उदारवादी राजनीतिक सिद्धान्तों में ही देखने को मिलता है। वस्तुतः उन सभी विचारधाराओं, जिसमें 20वीं शताब्दी में प्रतिस्पर्धा रही, में से केवल उदारवाद ने ही विचारों के मुक्त आदान-प्रदान की आज्ञा दी।